नरेश गोविंद वेज

बनाम

महाराष्ट्र राज्य व अन्य

04 दिसंबर, 2007

(न्यायमूर्ति एस. बी. सिन्हा और हरजीत सिंह बेदी)

सेवा कानून-न्यायिक अधिकारी-अनुशासनात्मक कार्यवाही- अन्य बातों के साथ-साथ उच्च न्यायालय में भेजे गए अभ्यावेदन में असंयमित भाषा का उपयोग करने के आरोप पर-अनिवार्य सेवानिवृत्ति का दंड-निर्धारित न्यायसंगत है- दोषी न्यायिक अधिकारी द्वारा प्रयोग की जाने वाली भाषा न्यायिक भाषा के अनुरूप नहीं है- आदेश अनुच्छेद 21 या अन्य नियमों या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं था -जांच अधिकारी की नियुक्ति दोषपूर्ण नहीं थी- साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान विभागीय कार्यवाही पर लागू नहीं होते और न ही जाँच अधिकारी एक न्यायालय है- सिविल सेवा (अनुशासन और अपील) नियम अनुच्छेद 309 के परंतुक के तहत बनाए गए हैं और इस प्रकार एक क़ानून है-महाराष्ट्र सिविल सेवा (अनुशासन और अपील) नियम, 1979-आर आर. 5 (1) (vii) और 8 -भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 21 और 309-साक्ष्य अधिनियम,1872- प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत

विभागीय कार्यवाही की प्रकृति न्यायिक नहीं है।

साक्ष्य अधिनियम, 1872-विभागीय जांच की कार्यवाहियों पर लागू नहीं होता।

उच्च न्यायालय की अनुशासनात्मक समिति ने, अपीलार्थी एक न्यायिक अधिकारी के विरूद्ध गई विभागीय कार्यवाही शुरू की। न्यायिक अधिकारी के खिलाफ ये आरोप थे कि वह अपने कर्तव्यों का निर्वहन नहीं कर रहा था, उसके द्वारा असंयमित भाषा और अन्य आरोप लगाए गए थे। जिला न्यायाधीश जाँच अधिकारी के रूप में नियुक्त किए गए थे। उन्होंने अपनी रिपोर्ट दी कि आरोप साबित हो गए हैं। उच्च न्यायालय की अनुशासन समिति ने, रिपोर्ट के मद्देनजर अपीलार्थी को दूसरा कारण दर्शक नोटिस जारी किया गया।

इसके जवाब में उन्होंने असंयमित भाषा का इस्तेमाल किया। महाराष्ट्र सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1982 के नियम 5 (1) (vii) के तहत सेवा से अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी गई। आगे महाराष्ट्र सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1982 के नियम 100 के तहत, उसे अनिवार्य सेवानिवृत्ति पर 2/3 पेंशन दी गई। उच्च न्यायालय की सिफारिश के अनुसार, राज्य सरकार ने तदनुसार दिनांक 14.12.2005 को आदेश पारित किया। अतः यह वतर्मान अपील है।

उच्च न्यायालय ने अपील खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया:

1. अपीलार्थी को आरोप पत्र दिया गया था। उन्हें सभी आवश्यक दस्तावेज दिए गए। गवाहों की सूची भी दी गई थी। जाँच अधिकारी के सामने, गवाहों की परीक्षा भी हुई थी।अपीलार्थी ने जाँच अधिकारी से उच्च न्यायालय के कुछ न्यायाधीशों पर समन जारी करवाने का भी निर्देश किया था। इस निवेदन को जांच अधिकारी ने मना कर दिया। जब अपीलार्थी से पूछताछ की गई, तो वह इस न्यायालय को यह सूचित नहीं कर सका कि वह किस उद्देश्य के लिए उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की जाँच करना चाहता था। अपीलार्थी के खिलाफ लगाए गए अधिकांश आरोप उसके द्वारा उनके अभ्यावेदन में संयमित भाषा के उपयोग के संबंध में थे। उन्होंने अपने दूसरे कारण बताआे नोटिस के लिए दिए गए प्रतिनिधित्व में भी ऐसी भाषा का इस्तेमाल किया गया था जो एक न्यायिक अधिकारी के लिए उचित नहीं है। एक स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायिक अधिकारी का हमेशा स्वागत है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं होगा कि एक न्यायिक अधिकारी, उच्च न्यायालय के खिलाफ, अपमानजनक या असंयमित भाषा का उपयोग करने के लिए स्वतंत्र है। ये हो सकता है कि जब उनके खिलाफ स्थानांतरण का आदेश पारित किया गया था, तब वह दुखी हुआ हो, लेकिन इसका मतलब यह नहीं होगा कि उच्च न्यायालय के समक्ष अभ्यावेदन करते समय वह ऐसी भाषा का प्रयोग करें। एक न्यायिक अधिकारी से यह उम्मीद की जाती है कि वह एेसी भाषा का उपयोग

करेगा, जो न्यायिक अधिकारी के लिए उपयुक्त हो।[पैरा 15,16 और 22] [869-सी, डी, ई, एफ; 872-सी]

2. महाराष्ट्र सिविल सेवा (अनुशासन और अपील) नियम,1979,भारत के संविधान, के अनुच्छेद 309 में संलग्न परंतुक के तहत तैयार किए गए थे। इस प्रकार, वे एक क़ानून की श्रेणी में आते है। इसके अलावा, अपीलार्थी ने, उच्च न्यायालय के समक्ष, उक्त नियमों की वैधता पर सवाल नहीं उठाया। [पैरा17] [869-एफ,जी;870-ए]

3. ये दलील कि जिला न्यायाधीश को उच्च न्यायालय द्वारा जाँच अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जाना एक तार्किक दलील है। जैसा कि अपीलार्थी द्वारा बहस की गई है, उच्च न्यायालय ने जाँच के लिए जिला न्यायाधीश अधिकारी को नियुक्त करके, अपनी अनुशासनात्मक शक्ति को प्रत्यायोजित नहीं किया। चूंकि जिला न्यायाधीश अपीलार्थी से उच्चतर पद पर हैं, उसे उच्च न्यायालय द्वारा जाँच अधिकारी नियुक्त किया जा सकता था। [पैरा 18] [870-ए, बी]

4. यह नहीं कहा जा सकता है कि राज्य सरकार का आदेश, दिनांकित 14.12.2005 भारत के संविधान की प्रस्तावना के साथ-साथ अनुच्छेद 21 के अधिकारातीत से बाहर है। यदि अपीलार्थी, बड़ी संख्या में गलत आचरण करने का दोषी पाया गया है, तो उससे भारत के संविधान

की प्रस्तावना और अनुच्छेद 21 के उल्लंघन का आधार नहीं माना जा सकता है। [पैरा 19] [870-सी, डी]

5. अब यह कानून का एक सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि जब किसी जाँच अधिकारी को अपराधी के खिलाफ लगाए गए आरोपों की जांच के लिए नियुक्त किया जाता है तो, ना तो वह अधिकारी अदालत है और न ही साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान उस पर लागू होते है। [पैरा 20] [870-ई]

6. ये दलीले कि जांच अधिकारी उक्त नियमों के नियम 8 में निर्धारित दंड लगाने की प्रक्रिया का पालन करने में विफल रहा समान रूप से ही बिना किसी योग्यता के हैं। केवल इसलिए कि नियम, बचाव पक्ष के गवाहों को बुलाने का प्रावधान प्रदान करता है, का मतलब यह नहीं होगा कि एक जांच अधिकारी गवाहों को नहीं बुलाने के संबंध में अपने विवेक का प्रयोग नहीं कर सकता है। एक जांच अधकारी, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को, जिनका इस मामले से कोई लेना-देना नहीं है, को नहीं बुला सकता। दोषी अधिकारी को यह दिखाना होगा कि, गवाहों को तलब किया जाना है, उनका अनुशासनात्मक कार्यवाही में शामिल मुद्दों से कुछ लेना देना है। यह स्पष्ट है कि इस तरह का अनुरोध जाँच अधिकारी को केवल असामंजस्य में डालने के लिए किया गया है। [पैरा 21 और 22] [870-एफ; 871-ए, बी]

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं. 5608/2007.

उच्च न्यायालय बॉम्बे की सिविल रिट याचिका संख्या 1354/2006 के निर्णय और अंतिम आदेश दिनांकित 02.05.2006 से।

नरेश गोविंद वजे- अपीलार्थी स्वयं।

एस. के. ढोलकिया, एस. एस. शिंदे, संजय खार्डे, आशा गोपालन नायर और डी. एस. माहरा - उत्तरदाताओं के लिए ।

न्यायालय का निर्णय एस. बी. सिन्हा, न्यायमूर्ति द्वारा दिया गया:

1. आज्ञा दी गई।

2. अपीलार्थी एक न्यायिक अधिकारी है। बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा की गई सिफारिश, जो कि जांच की रिपोर्ट या जांच के लिए नियुक्त अधिकारी द्वारा की गई जांच के आधार पर दोषी अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोपों पर आधारित थी, महाराष्ट्र सरकार ने, दोषी अधिकारी की सेवाएं समाप्त कर दी।

3. अपीलार्थी, महाराष्ट्र राज्य की न्यायिक सेवा में 16 नवंबर, 1995 को नियुक्त हुआ। उनकी पत्नी भी न्यायिक अधिकारी थी। लेकिन उन्होंने, दिसंबर, 2003 में इस्तीफा दे दिया।

4. अपीलार्थी ने विभिन्न अवसरों पर, उसके खिलाफ पारित स्थानांतरण के आदेशों के संबंध में, कई ज्ञापन जारी किए गए थे। जिससे हम निपटे, यह आवश्यक नहीं है।

5. उनके खिलाफ, न्यायिक पक्ष में, कई आक्षेप भी पारित किए गए। कई प्रतिकूल टिप्पणियां भी की गईं। 24 जनवरी, 2001 को शिकायत की गई है, जिसमें उनके विरुद्ध निम्नलिखित आरोप लगाए गए थे कि अपीलार्थी की आदत थीः

(क) "छुट्टी देने से इनकार करना,

(ख) जानबूझकर नोटिस जारी करना,

(ग) कर्मचारियों की सेवा पुस्तिकाओं में लाल स्याही में टिप्पणियों को नोट करना,

(घ) कर्मचारियों का अपमान करना,

(ई) वेतनवृद्धि के लिए रिपोर्ट में "संतोषजनक काम नहीं" लिखना और समय के भीतर उक्त रिपोर्ट नहीं भेजना,

(च) जी. पी. एफ. के अनुदान के लिए आवेदनों को अस्वीकार करना,

(छ) छुट्टी को बिना वेतन के छुट्टी में बदलना,

(ज) कर्मचारियों को चिकित्सा प्रमाण-पत्र और बिलों की रसीद प्रस्तुत करने के लिए प्रेरित करना।

(झ) सहायक अधीक्षक को धमकी देना।"

6. उच्च न्यायालय की अनुशासन समिति ने राय दी कि उनके खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू की जानी चाहिए। अनुशासनात्मक समिति द्वारा अनुमोदित आरोपों का वक्तव्य, आरोप पत्र, गवाहों की सूची और दस्तावेजों की सूची उन्हें दी गई थी। उन पर लगाए गए आरोप इस प्रकार हैं:-

"(क) पाटन में अपने कार्यकाल के दौरान, याचिकाकर्ता को अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में कोई दिलचस्पी नहीं थी और ट्रांसफर किए जाने के छः प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किए गए थे।

(ख) उच्च न्यायालय के साथ, अपने प्रार्थना पत्र दिनांकित 02.05.2000, संवाद करने में याचिकाकर्ता ने असंयमित भाषा का प्रयोग किया था।

(ग) याचिकाकर्ता को अक्सर मुख्यालय छोड़ने की आदत थी, जिससे अधिवक्ताओं और पक्षकारान को असुविधा होती थी। याचिकाकर्ता, केवल एक सुविधाजनक स्थान पर

स्थानांतरण प्राप्त करने के इरादे से, पक्षकारों, अधिवक्ताओं और कर्मचारियों से सनकपन और मनमौजी तरीके से व्यवहार करता था और उनको केवल परेशान कर रहा था और याचिकाकर्ता ने कार्यालय प्रशासन को प्रभावी ढंग और सुचारू रूप से नहीं चलाया और ऐसा करके उसने प्रशासनिक कार्य में अपनी अक्षमता का प्रदर्शन किया था।"

7. सतारा के जिला न्यायाधीश को जांच अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। अभिलेख पर सामग्री पर विचार करते हुए, उन्होंने माना कि दोषी अधिकारी ने उच्च न्यायालय को अपने स्थानांतरण के संबंध में अपना प्रतिनिधित्व प्रस्तुत करते समय, असंयमित भाषा का इस्तेमाल किया था और प्रशासनिक प्राधिकरण के खिलाफ आरोप लगाए थे। वह बार के सदस्यों, पक्षकारों और यहाँ तक कि कर्मचारियों को भी परेशान करते हुए भी पाया गया था। यह राय दी गई थी कि वह प्रशासन को प्रभावी ढंग से और सुचारू रूप से चलाने की स्थिति में नहीं था ।

8. उच्च न्यायालय की अनुशासन समिति ने, उक्त रिपोर्ट पर विचार करने पर, अपनी 16-08-2004 की बैठक में अपीलार्थी को दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी करने का निर्णय लिया। उसके जवाब में, उसने कथन किया कि वह अनुशासनात्मक समिति से इस तरह के नोटिस की अपेक्षा कर रहा था और, इसलिए उसके मन में कोई डर नहीं था। उसने आगे कहा

कि "यदि उच्च न्यायालय उसे बर्खास्त करना चाहता है तो उनके पास कहने के लिए कुछ नहीं होगा क्योंकि वे न्यायपालिका का हिस्सा थे और उन्हें पता था कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण उसके खिलाफ कार्रवाई करेगा।" उन्होंने यह भी कहा कि उच्च न्यायालय ने अक्सर उनका स्थानांतरण करके उन्हें लगातार मुश्किल में डाल दिया था और वह उच्च न्यायालय द्वारा पारित किसी भी आदेश के बारे में परेशान नहीं था। उन्होंने उच्च न्यायालय के खिलाफ कार्रवाई शुरू करने की भी धमकी दी।

9. अनुशासनात्मक समिति ने 22 नवंबर, 2005 को अपनी बैठक में अपीलार्थी द्वारा किया गया अभ्यावेदन खारिज कर दिया गया था। अपीलार्थी पर महाराष्ट्र सिविल सेवा (अनुशासन और अपील) नियम, 1979 (संक्षेप में" उक्त नियम") के नियम 5 (1) (vii) के तहत उस पर निर्धारित सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्ति की एक बड़ी दण्डात्मक कार्यवाही लगाने का निर्णय लिया गया था। इसके अलावा यह निर्णय लिया गया कि उन्हें महाराष्ट्र सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1982 के नियम 100 के तहत 2/3 स्वीकार्य सेवानिवृत्ति पेंशन दी जाएं।

10. की गई सिफारिशों के अनुसार और उन्हें आगे बढ़ाते हुए दिसंबर, 2005 उस प्रभाव के लिए जो अपीलार्थी को सूचित किया गया था 16 दिसंबर, 2005 को।

11. उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी ने एक रिट याचिका डब्ल्यू. पी. सं. 8640/2005 17 नवंबर, 2005 ko दायर की दायर की। हालांकि, इस याचिका को 21 दिसंबर, 2005 को वापस ले लिया गया।

12. उन्होंने 28 फरवरी, 2006 को एक और रिट याचिका डब्ल्यू. पी. संख्या 1354/2006 के रूप में दायर की जो बड़ी संख्या में राहत का दावा करती हैं। उक्त न्यायालय की खंड पीठ के द्वारा दिनांक 02.05.2006, को याचिका के खंड (एच), (के), (टी) और (जेड) और रिट याचिका के पैरा 17 की प्रार्थना (वाई) का पहला भाग में की गई प्रार्थनाओं के संबंध में आदेश एक जारी किया।

13. उक्त रिट याचिका उक्त निर्णय के कारण खारिज कर दी गई।

14. श्री नरेश गोविंद वझे, अपीलार्थी, जो व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुए, अन्य बातों के साथ-साथ नियमों की संवैधानिक वैधता पर भी सवाल उठाया।

उन्होंने यह भी कहा कि विभागीय कार्यवाही एक न्यायिक कार्यवाही है, और जांच अधिकारी न्यायालय है, जिस पर साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे। उनके अनुसार, उक्त नियम के नियम 8 के संदर्भ में, जांच अधिकारी की ओर से यह अनिवार्य था कि जिन गवाहों का वह परीक्षण करना चाहता था, उनको समन किया जाता और जिनको मना कर,

प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया। यह भी आग्रह किया गया कि उन्होंने बचाव बयान के माध्यम से एक हलफनामा दायर किया था और उच्च न्यायालय की ओर से प्रतिपरीक्षा नहीं की गई, तो इस दृष्टिकोण से हलफनामा में किए गए अभिकथन उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किए गए हैं, उसमें यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि और इस परिप्रेक्ष्य में जाँच अधिकारी ने से उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों के बारे मे उसे दोषी ठहराने में गंभीर गलती की है।

यह निवेदन किया गया था कि उच्च न्यायालय ने एक गंभीर त्रुटि की, जहाँ तक कि वह न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति का प्रयोग करने में विफल रहा है।

15. अपीलार्थी न्यायिक अधिकारी है। निर्विवाद रूप से, उन्हें आरोपों का ज्ञापन दिया गया था। सभी आवश्यक दस्तावेज दिए गए थे। उन्हें गवाहों की सूची भी दी गई थी। जाँच अधिकारी के समक्ष, गवाहों से पूछताछ की गई। अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के कुछ माननीय न्यायाधीशों को जांच अधिकारी द्वारा समन जारी करने के लिए प्रार्थना की थी। जिसको उन्होंने अस्वीकार कर दिया था। जब हमारे द्वारा एक प्रश्न के संबंध में पूछा गया कि उन्होंने किस आशय से उच्च न्यायालय के न्यायाधिशों को परीक्षित करवाना चाहा और अपीलार्थी के खिलाफ लगाए गए आरोपों में वह किस तरह से उसके पक्ष में गवाही दे, तो अपीलार्थी के

पास इसका कोई जवाब नहीं था। उसके खिलाफ अधिकांश आरोप उसके अभ्यावेदन में असंयमित भाषा के उपयोग के संबंध में थे। उसने दूसरे कारण दर्शाओ नोटिस में, अपने अभ्यावेदन में, ऐसी भाषा जो हमारी राय में न्यायिक अधिकारी को शोभा नहीं देती हो, का उपयोग किया था।

16. जबकि एक स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायिक अधिकारी का हमेशा स्वागत है लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि उच्च न्यायालय के समक्ष अभ्यावेदन करते समय वह ऐसी असंयमित भाषा का उपयोग करे. उसके ट्रांसफर के आदेश के संबंध में वह असंतुष्ट तो हुआ होगा लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि वह उच्च न्यायालय के समक्ष अभ्यावेदन करते समय वह ऐसी असंयमित भाषा का उपयोग करे। यह उम्मीद की जाती है कि एक न्यायिक अधिकारी ऐसी भाषा का उपयोग करेगा जो एक न्यायिक अधिकारी के लिए उपयुक्त हो।

17. अपीलार्थी ने पहले उच्च न्यायालय में उक्त नियमों की वैधता पर सवाल नहीं उठाया था। एेसे में अन्यथा इसके लिए कोई आधार नहीं है। हमारे समक्ष उसका यह तर्क कि उक्त नियम एक मौलिक विधि के तहत नहीं बनाए गए हैं, वह अधिकार से परे है, अस्वीकार किए जाने योग्य है क्योंकि उक्त नियम अनुच्छेद 309 भारत के संविधान में संलग्न परंतुक के तहत बनाए गए थे। इस प्रकार, उक्त नियम कानून की श्रेणी में आते है।

18. अपीलार्थी की दलील कि जिला न्यायाधीश सतारा को उच्च न्यायालय द्वारा जाँच अधिकारी के रूप में नियुक्त नहीं कर सकते हैं बिना किसी सार के दी गई अपील है। जिला न्यायाधीश की जाँच अधिकारी के रूप में नियुक्ति करके, उच्च न्यायालय ने अपनी अनुशासनात्मक शक्ति को नहीं सौंपा है, जैसा कि अपीलार्थी के द्वारा कहा गया है। उच्च न्यायालय द्वारा जिला न्यायाधीश को अपीलार्थी के जांच अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जा सकता था क्योंकि वह उससे वरिष्ठतम है। हम इस संबंध में, इस प्रकार अपीलार्थी की दलीलें, स्वीकार करने का कोई कारण नहीं देखते हैं।

19. अपीलार्थी इससे पहले 16 दिसंबर, 2005 का नोटिस के लिए भारत के संविधान की प्रस्तावना और अनुच्छेद 21 के अधिकार से बाहर होने की सीमा तक जा चुका है। हम समझ नहीं पा रहे हैं कि किस आधार पर ऐसा निवेदन किया गया था। अगर वह बड़ी संख्या में गलत आचरण करने पर दोषी पाया गया है तो उस पर भारत के संविधान की प्रस्तावना के साथ-साथ संविधान के अनुच्छेद 21 के उल्लंघन के आधार पर सवाल नहीं उठाया जा सकता है।

20. इसी तरह, अपीलार्थी का यह निवेदन कि विभागीय कार्यवाही एक न्यायिक कार्यवाही है, तो जांच अधिकारी को एक न्यायालय घोषित किया जाए और उस पर साक्ष्य अधिकारी के प्रावधान लागू हों भी एक अयोग्य दलील है। अब यह कानून का एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत

है कि दोषी अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोपों की जांच के लिए नियुक्त जांच अधिकारी न तो अदालत है और न ही साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान उस पर लागू होते हैं।

21. अपीलार्थी का प्रस्तुत करना कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण जांच अधिकारी निर्धारित दंड लगाने की प्रक्रिया का पालन करने में विफल रहे उक्त नियमों के नियम 8 में नीचे किसी भी योग्यता के बिना समान रूप से है।

उक्त नियमों के नियम 8 के उप-नियम (5), (6) और (7) इस प्रकार हैंः

> "(5) (क) बचाव पक्ष का लिखित बयान प्राप्त होने पर, अनुशासनात्मक प्राधिकारी स्वयं इन अनुच्छेदों की जाँच कर सकता है -शुल्क जो स्वीकार नहीं किया जाता है, या, यदि वह इसे आवश्यक समझता है उप-नियम (2) के तहत, इस उद्देश्य के लिए एक पूछताछ प्राधिकरण नियुक्त करें, और जहां सभी प्रभार के लेखों को स्वीकार कर लिया गया है। सरकारी कर्मचारी द्वारा अपने बचाव के लिखित बयान में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी प्रत्येक आरोप पर अपने निष्कर्ष दर्ज करेगा ऐसा साक्ष्य लेना जो वह उचित समझे और उस तरीके से कार्य करेगा इन नियमों के नियम 9 में निर्धारित;

(ख) यदि बचाव पक्ष द्वारा कोई लिखित बयान प्रस्तुत नहीं किया जाता है। सरकारी कर्मचारी, अनुशासनात्मक प्राधिकारी स्वयं प्रभार के लेखों की जांच कर सकता है या, यदि वह ऐसा करना आवश्यक समझता है, इन नियमों के उप-नियम (2) के तहत एक जांच प्राधिकारी की नियुक्ति उद्देश्य;

(ग) जहाँ अनुशासनात्मक प्राधिकारी एक जांच प्राधिकारी की नियुक्ति करता है। यह किसी आदेश द्वारा किसी सरकारी कर्मचारी या कानूनी व्यक्ति को नियुक्त कर सकता है। व्यवसायी, जिसे प्रस्तुत करने के लिए "प्रस्तुतकर्ता अधिकारी" के रूप में जाना जाता है पूछताछ से पहले आरोप के लेखों के समर्थन में मामला प्राधिकरण।

(6) अनुशासनात्मक प्राधिकारी जहां जाँच नहीं करेगा प्राधिकारी, पूछताछ प्राधिकारी को अग्रेषित करें -

(i) प्रत्येक आरोप-पत्र और उसके विवरण की एक प्रति। दुराचार या दुर्व्यवहार के आरोप;

(ii) द्वारा प्रस्तुत किए गए बचाव के लिखित बयान की एक प्रति, यदि कोई हो। सरकारी कर्मचारी;

(iii) उप-अनुच्छेद में निर्दिष्ट गवाहों के बयानों की प्रतियां, यदि कोई हों, इस नियम के नियम (3);

(iv) में निर्दिष्ट दस्तावेजों के वितरण को साबित करने वाला साक्ष्य। सरकारी कर्मचारी के लिए उप-नियम (3); और

(v) प्रस्तुतकर्ता अधिकारी की नियुक्ति के आदेश की एक प्रति।

(7) सरकारी कर्मचारी व्यक्तिगत रूप से सदन के समक्ष उपस्थित होगा। ऐसे दिन और ऐसे समय पर दस कार्य करने वाले अधिकारियों से पूछताछ करना। उसके द्वारा प्रभार की वस्तुओं की प्राप्ति की तारीख से दिन और दुराचार या दुर्व्यवहार के आरोपों का बयान, जैसा कि पूछताछ प्राधिकारी, लिखित सूचना द्वारा, इसमें निर्दिष्ट कर सकता है, की ओर से, या दस दिनों से अधिक की अवधि के भीतर, जैसे पूछताछ करने वाला प्राधिकारी अनुमति दे सकता है।"

22. अपीलार्थी ने इस बारे में विस्तार से नहीं बताया कि उक्त नियमों के प्रावधानों का पालन कैसे नहीं किया गया। केवल इसलिए कि बचाव पक्ष के गवाहों को बुलाने का प्रावधान नियम प्रदान करता है, जाँच

अधिकारी के पास इस संबंध में कोई विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र नहीं था। एक जांच अधिकारी किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को समन नहीं कर सकता खासतौर से तब जिनका इस मामले से कोई लेना-देना नहीं है। दाेषी अधिकारी को दिखाना चाहिए कि बुलाए जाने वाले गवाहों का अनुशासनात्मक कार्यवाही के मुद्दों से कुछ लेना-देना है। यह स्पष्ट है कि इस तरह का अनुरोध केवल जांच अधिकारी को असमंजस में डालने के लिए किया गया था। जैसा कि पहले बताया गया, जब अपीलार्थी से पूछताछ की गई, तो वह हमें यह नहीं बता सका कि किस उद्देश्य के लिए वह उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों से पूछताछ करना चाहता था।

23. उपरोक्त दर्शित कारणों से, हम इस अपील में कोई योग्यता नहीं पाते हैं। यह अपील कोस्ट के साथ खारिज की जाती है। वकील के शुल्क का मूल्यांकन Rs.10,000/- (केवल दस हजार रुपये) किया गया।

के.के.टी. याचिका खारिज की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवाद न्यायिक अधिकारी तुषार बिश्नोई (आर.जे.एस) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण मान्य होगा।